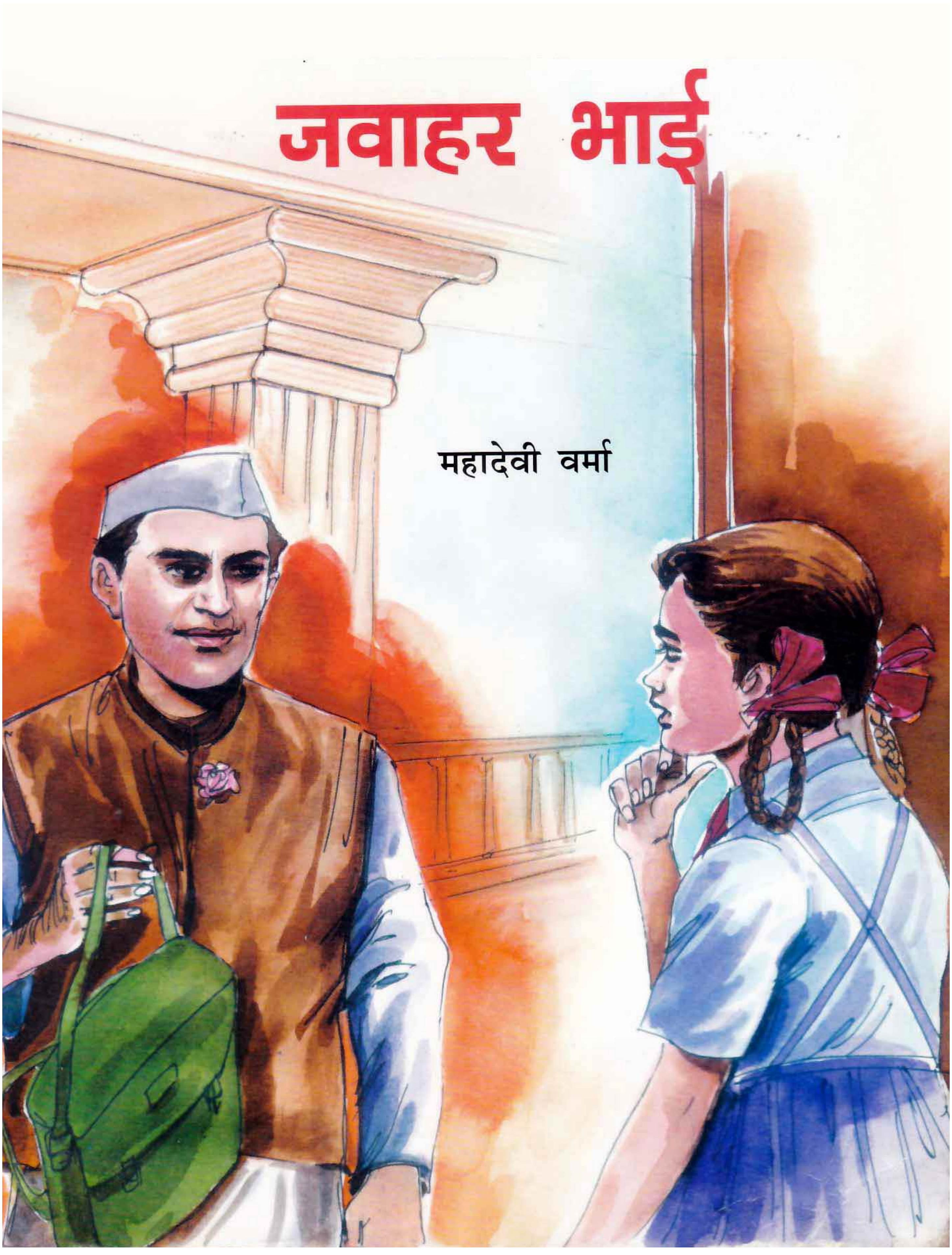
जवाहर भाई

महादेवी वर्मा





जवाहर भाई

जब-जब मैं भारत के प्रथम प्रधान मंत्री के रूप में भाई जवाहरलाल के गर्वीले मुख का स्मरण करती हूँ तब-तब उस मुख की दर्प-स्पीत रेखाओं पर एक दूसरे ही तरुण-कोमल मुख की सरल स्वप्निल रेखाएँ उभर आती हैं और मैं अर्द्धशती पूर्व अतीत की धूप-छाँह में खो जाती हूँ।

वर्तमान शती के दूसरे दशक में ही अपनी बहिन के साथ क्रास्थवेट गर्ल्स कालेज के छात्रावास में आ गई थी। तत्कालीन आचार्या कुमारी तुलास्कर ही हमारी स्थानीय अभिभाविका थीं जो राष्ट्रीय विचार की महिला होने के कारण स्वातंत्र्य संग्राम की गतिविधि से परिचित भी रहती थीं और विशेष अवसरों पर आनंद भवन भी जाती थीं।

एक दिन जैसे ही कक्षा से बाहर आई आचार्या जी को ताँगे में बैठने के लिए प्रस्तुत पाया। तब छात्रावास तक जाकर पुस्तकें रखने और कपड़े बदलने का अवकाश ही नहीं था, अतः उनके साथ आनंद भवन जाने की उत्सुकता में बस्ता लिए स्कूल के कपड़ों ही में ताँगे में जा बैठी।

उस दिन लौटते समय न जाने किस तन्मयता या हड़बड़ी में मैं बस्ता वहीं छोड़ कर बाहर आ गई। बरामदे की सीढ़ियों पर पहुँचते ही पीछे से सुनाई दिया- 'यह किताबें तुम्हारी हैं?' मुड़ कर देखते ही एक स्तब्धता ने जहाँ का तहाँ खड़ा कर दिया। बरामदे में खड़े भाई जवाहरलाल मेरे बस्ते में झुला रहे थे।

बस्ते का स्वामित्व मैंने सिर हिलाकर स्वीकार किया और उसे लेने के

लिए हाथ बढ़ाया। उन्होंने सावधानी से बस्ता मुझे थमाते हुए भृकुटियों पर बल देकर कहा– 'क्या वाहियात बात है ! किताबें फेंकती घूमती हो। पढ़ती क्या खाक होगी?'



भाई जवाहरलाल जी के मुख से 'क्या वाहियात बात है' मैंने अनेक बार अनेक अवसरों पर सुना है और हर बार उस वाक्य पर हँसी ही आई है। मोटर दुर्घटना में मेरे पैर की हड्डी टूट जाने पर भी उन्होंने कहा– 'क्या वाहियात बात है, तुमने अपना पैर ही तोड़ लिया'। मेरे कई महीनों तक अस्वस्थ रहने पर भी उनकी टिप्पणी थी– 'क्या वाहियात बात है, तुम

अकसर बीमार हो जाती हो'। पर उस सुदूर अतीत में उस दिन उनकी डाँट में, बड़े की छोटे के प्रति जो आत्मीयता थी उसने मुझे रुला दिया।

सातवीं कक्षा के विद्यार्थियों में जिस अनुपात से ज्ञान कम होता है, उसी अनुपात से भावुकता अधिक होती है। किसी छोटी लड़की को रुला दिया है, यह विचार ही उनके पश्चात्ताप के लिए पर्याप्त था। अतः मेरे कंधे थपथपाते हुए और किताबें सावधानी से रखने का उपदेश देते हुए मुझे ताँगे तक पहुँचाया।

'चाँद' की संचालिका श्रीमती विद्यावती सहगल मेरी अध्यापिका थीं। उन्होंने मुझसे आग्रहपूर्वक अनुरोध किया कि मेरे माध्यम से यदि कुछ आवश्यक पत्र आवें तो मैं उन्हें या व्यक्ति विशेष को देने का कष्ट करूँ। यह व्यवस्था बहुत दिन चली भी। भाई जवाहरलाल जी को कैसे ज्ञात हुआ यह तो नहीं कहा जा सकता, किंतु उन्हें संभवतः मेरे संबंध में चिंता हुई। एक दिन अचानक उन्होंने पूछा– 'सुना है तुम्हारे मार्फत कुछ खत आते हैं, क्या यह सच है?' मैंने स्वीकार किया। फिर प्रश्न हुआ– 'क्या तुम जानती हो कि खतों में क्या लिखा होता है या कौन किसको भेजता है?'

मेरे नहीं कहने पर उन्होंने उस संकट की संभावना बताई जो ऐसे अनजान माध्यम पर आ सकता है। मैं वचनबद्ध हूँ, सुनकर वे गंभीर हो गए। कुछ दिनों के उपरांत जब यह पत्राचार बंदहो गया, तब मुझे उसके कारण का अनुमान करने में कुछ समय लगा। किसी कार्य का अर्थ बिना समझे हुए उसे करने के वे सदा विरोधी रहे।

मैंने उन्हें अनेक बार देखा–मालाओं से लदे-फंदे भाषण देते, जेल जाते, जेल से आते, घर में बड़ी मधुर आत्मीयता से कमला भाभी से बातें करते, छोटी-सी इंदिरा जी पर स्नेहिल हाथ फेरते, संपूर्ण आत्मसमपर्ण के साथ बापू के चरणों में बैठते। स्वातंत्र्य संग्राम के सैनिक और सेनापति के रूप में भी उनका संपर्क सुलभ रहा और प्रयाग महिला विद्यापीठ के प्रथम कुलपति के

रूप में भी। किसी भी स्थिति में उनके मानवीय रूप से कोई अंतर नहीं मिला।

चरम शासकीय व्यस्तता में भी उनका स्नेहिल और विश्वासी मानवीय रूप से अक्षुण्ण ही रहा। उनके प्रधानमंत्री होने के उपरांत मुझे लेखकों के कापीराइट में संशोधन के संबंध में मौलाना आजाद से मिलने दिल्ली जाना पड़ा।



प्रधानमंत्री से मिलने का समय निश्चित करने का अवकाश नहीं था, अतः ऐसे ही प्रभात वेला में उनके विशाल भवन पर उपस्थित हुई। उनके निजी सचिव ने कहा कि बिना पूर्व निश्चित समय के भेंट होना संभव नहीं। यहाँ तो लोग 10-10 दिन प्रतीक्षा में पड़े रहते हैं। सुनते ही मेरा मन विद्रोह कर उठा। मैंने कहा वह प्रधानमंत्री की व्यस्तता का प्रमाण हो सकता है, परंतु जो 10-10 दिन पड़े रहते हैं, उनके निठल्लेपन का तो निश्चित प्रमाण है। आप जाकर उन्हें सूचना देने का कष्ट करें कि प्रयाग से महादेवी आई है और उसे आज ही लौट जाना है। वह उनसे मिलने की प्रतीक्षा में जीवन के 10 दिन खोने की स्थिति में नहीं है।

मेरा संदेश किस रूप में पहुँचा यह पता नहीं, किंतु तुरंत ही भाई जवाहर लाल तेजी के साथ जीने से उतरते दिखाई दिए और मेरा हाथ पकड़कर एक प्रकार से खींचते हुए ही ऊपर की मंजिल में ले आए। 'यहाँ बैठो, तुम्हारे लिए कॉफ़ी आती है। इलाहाबाद के हालचाल बताओ। तुमसे किसने क्या कह दिया', आदि इस प्रकार कहते गए कि मुझे न रूठने की याद रही न उपालंभ देने की।

अनेक कार्यव्यस्त रहने पर भी दूसरों के विश्वास और सुविधा की चिंता करना, वे कदाचित् ही कभी भूलते थे। मेरी स्मृति में एक और घटना प्रत्यक्ष हो जाती है। एक बार जब दद्दा मैथिलीशरण और मैं उनसे मिलने गए तब उन्होंने सहज आत्मीयता से मुझे रात में अपने साथ भोजन करने का निमंत्रण दे डाला। दद्दा विनोदी भाव से बोल उठे, 'अवश्य पंडित जी, महादेवी की इस बार शुद्धि कर डालिए। हम तो किसी प्रकार बच ही गए हैं, यह न बच पावें।'

तब उन्हें स्मरण आयाकि मैं भी तो दद्दा ने सविनोद कहा– 'आप सबने हमारे लिए और छोड़ा भी क्या है।' इस विनोद के बीच भी वे इंदिरा जी को बुलाकर हमारे लिए और छोड़ा भी क्या है।' इस विनोद के बीच भी वे इंदिरा जी को बुलाकर अलग शुद्ध शाकाहारी भोजन बनवाने की व्यवस्था करने का निर्देश देना नहीं भूले।

रात में देखा काँटे-छुरी तथा मांस के अनेक खाद्य पदार्थों से सजी लंबी मेज के एक ओर मेरे लिए कढ़ी, चावल, शाक, दही आदि के कटोरे-कटोरियों से प्रसाधित चमचमाती थाली रखी हुई है। मेरे आतिथेय ने जिस प्रकार मेरी इच्छा सुविधा का ध्यान रखा था उसी प्रकार वे मेज के शिष्टाचार की ओर भी सतर्क थे। उन्होंने हँसते हुए, मेरी थाली अपने पास रखवाई और अत्यंत आत्मीयता से हौले से मुझसे कहा, 'जो तुम नहीं खाती हो, उसे दूसरों को खाते देख नाक-भौं मत चढ़ाना, अच्छा!' उनके समान प्रसन्न विनोदी और स्नेही आतिथेय बिरल होंगे।

आम काटने की कला में उन्हें विशेष प्रवीणता प्राप्त थी, जिसका प्रदर्शन कर वे अपने अतिथियों को विस्मित कर देते थे। चाकू से कलमी आम को एक ओर से चीर कर बड़ी सफाई से उसकी गुठली बाहर निकाल देते थे, पर आम साबित सा दिखाई देता रहता था।

आज वे अपनी स्वप्नसृष्टि के साथ तिरोहित हो चुके हैं। उन्होंने अपने स्वप्नदर्शी होने का मूल्य चुकाया और देश ने एक स्वप्नदर्शी पाने का।

❑❑



सुबह जायेंगे खेत पर
पाठशाला में रात को